OSHO

जिन खोजा तिन पाइयां

गहरे पानी पैठ

ओशो

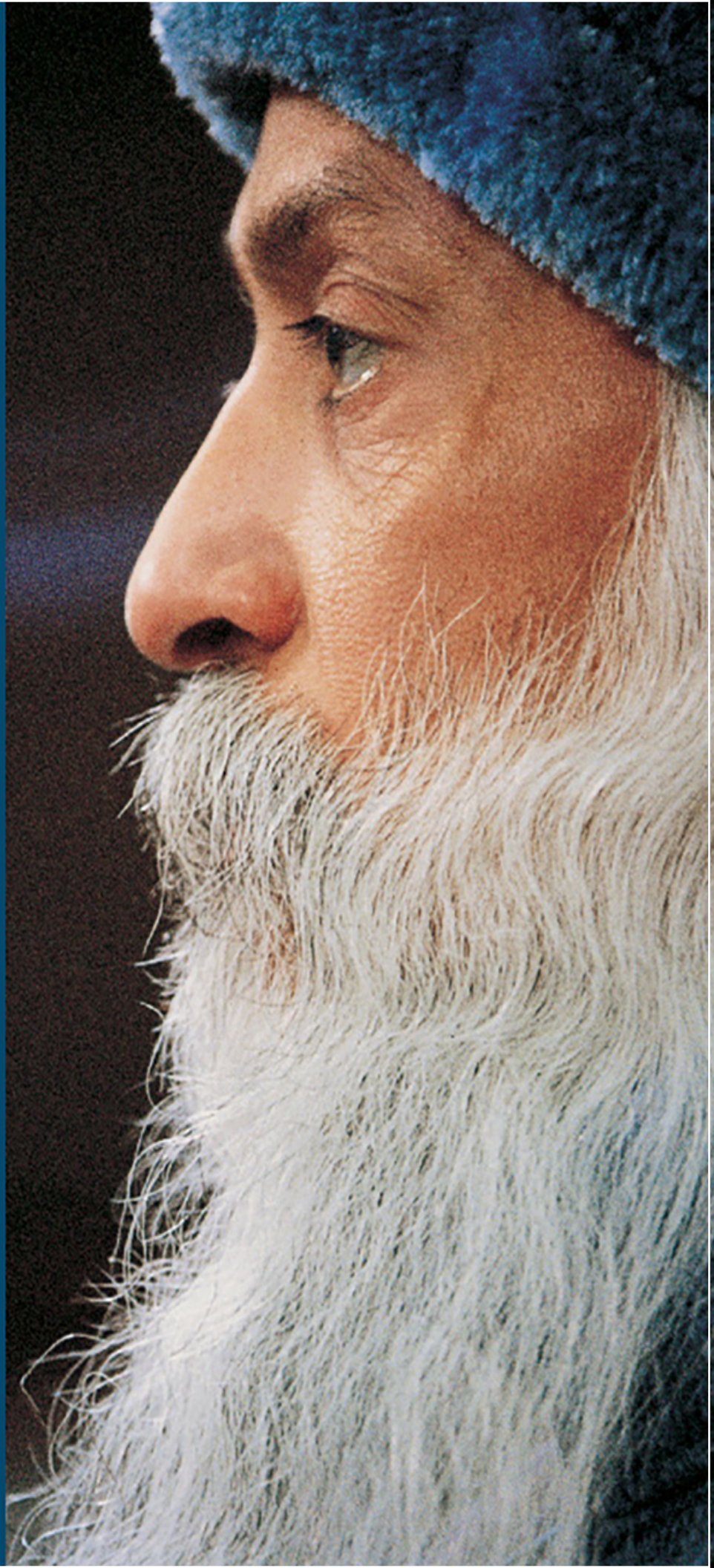

OSHO

जिन खोजा तिन पाइयां

गहरे पानी पैठ

ओशो

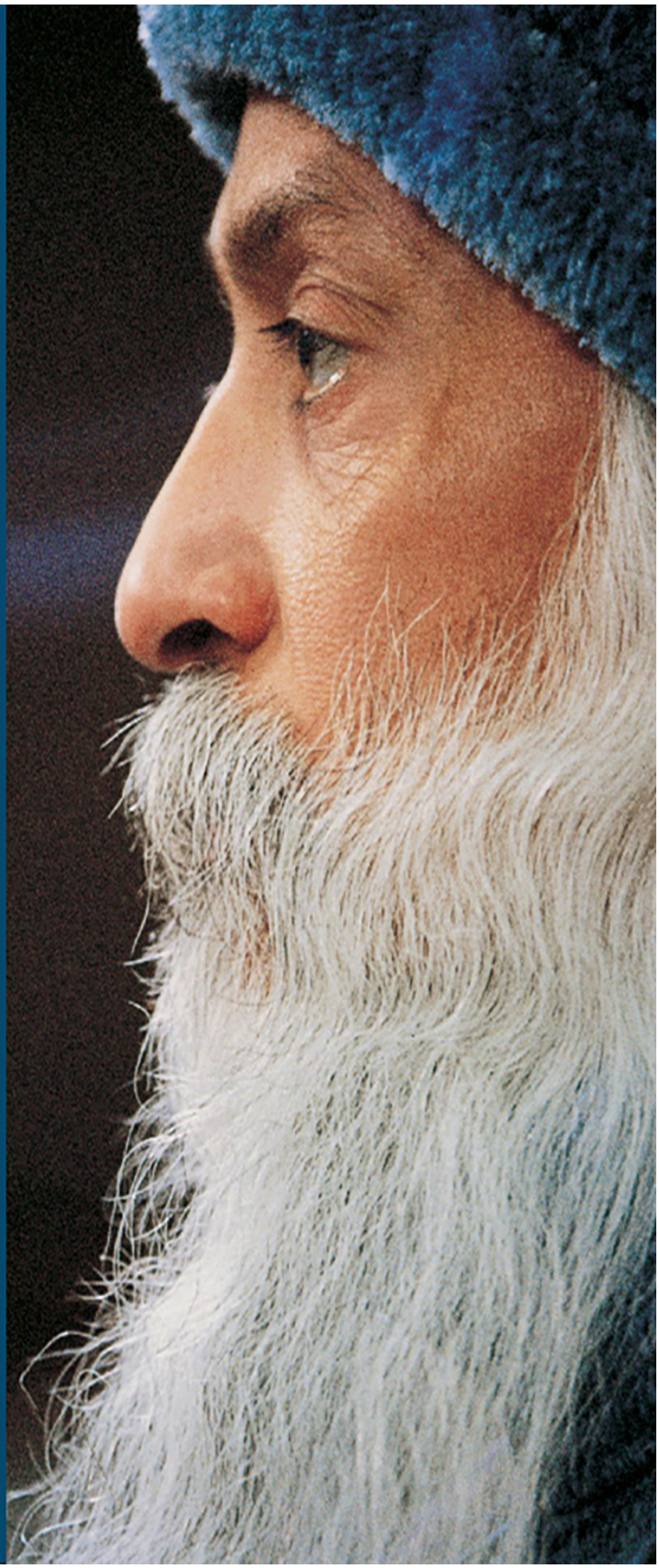

जिन खोजा तिन पाइयां

ध्यान साधना शिविर, नारगोल में हुई सीरीज के अंतर्गत कुंडलिनी-योग पर दी गईं छह OSHO Talks तथा ध्यान-प्रयोग एवं मुंबई में साधना-गोष्ठी के दौरान साधकों के साथ हुई तेरह OSHO Talks का संग्रह

ISBN: 978-0-88050-823-0

Copyright © 1970, 2016 OSHO International Foundation
www.osho.com/copyrights

Images and cover design © OSHO International Foundation

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopying, recording, or by any information storage and retrieval system, without prior written permission from the publisher.

OSHO is a registered trademark of OSHO International Foundation
www.osho.com/trademarks

This book is a series of original talks by Osho, given to a live audience. All of Osho's talks have been published in full as books, and are also available as original audio recordings. Audio recordings and the complete text archive can be found via the online OSHO Library at
www.osho.com/Library

OSHO MEDIA INTERNATIONAL
www.osho.com/oshointernational

ISBN- 978-0-88050-823-0

: 1
यात्रा कुंडलिनी की

मेरे प्रिय आत्मन्!

मुझे पता नहीं कि आप किस लिए यहां आए हैं। शायद आपको भी ठीक से पता न हो, क्योंकि हम सारे लोग जिंदगी में इस भांति ही जीते हैं कि हमें यह भी पता नहीं होता कि क्यों जी रहे हैं, यह भी पता नहीं होता कि कहां जा रहे हैं, और यह भी पता नहीं होता कि क्यों जा रहे हैं।

मूर्च्छा और जागरण

जिंदगी ही जब बिना पूछे बीत जाती हो तो आश्चर्य नहीं होगा कि आपमें से बहुत लोग बिना पूछे यहां आ गए हों कि क्यों जा रहे हैं। शायद कुछ लोग जानकर आए हों, संभावना बहुत कम है। हम सब ऐसी मूर्च्छा में चलते हैं, ऐसी मूर्च्छा में सुनते हैं, ऐसी मूर्च्छा में देखते हैं कि न तो हमें वह दिखाई पड़ता जो है, न वह सुनाई पड़ता जो कहा जाता है, और न उसका स्पर्श अनुभव हो पाता जो सब ओर से बाहर और भीतर हमें घेरे हुए है।

मूर्च्छा में ही यहां भी आ गए होंगे। ज्ञात भी नहीं है; हमारे कदमों का भी हमें कुछ पता नहीं है; हमारी श्वासों का भी हमें कुछ पता नहीं है। लेकिन मैं क्यों आया हूं, यह मुझे जरूर पता है; वह मैं आपसे कहना चाहूंगा।

बहुत जन्मों से खोज चलती है आदमी की। न मालूम कितने जन्मों की खोज के बाद उसकी झलक मिलती है--जिसे हम आनंद कहें, शांति कहें, सत्य कहें, परमात्मा कहें, मोक्ष कहें, निर्वाण कहें--जो भी शब्द ठीक मालूम पड़े, कहें। ऐसे कोई भी शब्द उसे कहने में ठीक नहीं हैं, समर्थ नहीं हैं। जन्मों-जन्मों के बाद उसका मिलना होता है।

और जो लोग भी उसे खोजते हैं, वे सोचते हैं, पाकर विश्राम मिल जाएगा। लेकिन जिन्हें भी वह मिलता है, मिलकर पता चलता है कि एक नये श्रम की शुरुआत है, विश्राम नहीं। कल तक पाने के लिए दौड़ थी और फिर बांटने के लिए दौड़ शुरू हो जाती है। अन्यथा बुद्ध हमारे द्वार पर आकर खड़े न हों, और न महावीर हमारी सांकल को खटखटाएं, और न जीसस हमें पुकारें। उसे पा लेने के बाद एक नया श्रम।

सच यह है कि जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, उसे पाने में जितना आनंद है, उससे अनंत गुना आनंद उसे बांटने में है। जो उसे पा लेता है, फिर वह उसे बांटने को वैसे ही व्याकुल हो जाता है, जैसे कोई फूल खिलता है और सुगंध लुटती है, कोई बादल आता है और बरसता

है, या सागर की कोई लहर आती है और तटों से टकराती है। ठीक ऐसे ही, जब कुछ मिलता है तो बंटने के लिए, बिखरने के लिए, फैलने के लिए प्राण आतुर हो जाते हैं।

मेरा मुझे पता है कि मैं यहां क्यों आया हूं। और अगर मेरा और आपका कहीं मिलन हो जाए, और जिस लिए मैं आया हूं अगर उस लिए ही आपका भी आना हुआ हो, तो हमारी यह मौजूदगी सार्थक हो सकती है। अन्यथा अक्सर ऐसा होता है, हम पास से गुजरते हैं, लेकिन मिल नहीं पाते। अब मैं जिस लिए आया हूं, अगर उसी लिए आप नहीं आए हैं, तो हम पास होंगे, निकट रहेंगे, लेकिन मिल नहीं पाएंगे।

सत्य को देखने की आंख

कुछ जो मुझे दिखाई पड़ता है, चाहता हूं, आपको भी दिखाई पड़े। और मजा यह है कि वह इतने निकट है कि आश्चर्य ही होता है कि वह आपको दिखाई क्यों नहीं पड़ता! और कई बार तो संदेह होता है कि जैसे जानकर ही आप आंख बंद किए बैठे हैं; देखना ही नहीं चाहते हैं; अन्यथा इतने जो निकट है वह आपके देखने से कैसे चूक जाता! जीसस ने बहुत बार कहा है कि लोगों के पास आंखें हैं, लेकिन वे देखते नहीं; कान हैं, लेकिन वे सुनते नहीं। बहरे ही बहरे नहीं हैं और अंधे ही अंधे नहीं हैं। जिनके पास आंख और कान हैं वे भी अंधे और बहरे हैं। इतने निकट है, दिखाई नहीं पड़ता! इतने पास है, सुनाई नहीं पड़ता! चारों तरफ घेरे हुए है, स्पर्श नहीं होता! क्या बात है? कहीं कुछ कोई छोटा सा अटकाव होगा, बड़ा अटकाव नहीं है।

ऐसा ही है, जैसे आंख में एक तिनका पड़ जाए और पहाड़ दिखाई न पड़े फिर, आंख बंद हो जाए। तर्क तो यही कहेगा कि पहाड़ को जिसने ढांक लिया, वह तिनका बहुत बड़ा होगा। तर्क तो ठीक ही कहता है। गणित तो यही कहेगा, इतने बड़े पहाड़ को जिसने ढांक लिया, वह तिनका पहाड़ से बड़ा होना चाहिए। लेकिन तिनका बहुत छोटा है; आंख बड़ी छोटी है। तिनका आंख को ढंक लेता है, पहाड़ ढंक जाता है।

हमारी भीतर की आंख पर भी कोई बहुत बड़े पहाड़ नहीं हैं, छोटे तिनके हैं। उनसे जीवन के सारे सत्य छिपे रह जाते हैं। और वह आंख.निश्चित ही, जिन आंखों से हम देखते हैं उस आंख की मैं बात नहीं कर रहा हूं। इससे बड़ी भ्रांति पैदा होती है। यह ठीक से खयाल में आ जाना चाहिए कि इस जगत में हमारे लिए वही सत्य सार्थक होता है, जिसे पकड़ने की, जिसे ग्रहण करने की, जिसे स्वीकार कर लेने की, भोग लेने की रिसेप्टिविटी, ग्राहकता हममें पैदा हो जाती है।

सागर का इतना जोर का गर्जन है, लेकिन मेरे पास कान नहीं हैं तो सागर अनंत-अनंत काल तक भी चिल्लाता रहे, पुकारता रहे, मुझे कुछ सुनाई नहीं पड़ेगा। जरा से मेरे कान न हों कि सागर का इतना बड़ा गर्जन व्यर्थ हो गया; आंखें न हों, सूर्य द्वार पर खड़ा रहे, बेकार हो गया; हाथ न हों और मैं किसी को स्पर्श करना चाहूं, तो कैसे करूं?